HAL open science

साहित्य का नया रास्ता

Pramod Ranjan

▶ To cite this version:

Pramod Ranjan. साहित्य का नया रास्ता. विपाशा, 2023, 39 (219), pp.84-88. ⟨10.17613/gmpr-6632⟩. ⟨hal-04224148⟩

HAL Id: hal-04224148

https://hal.science/hal-04224148

Submitted on 4 Oct 2023

HAL is a multi-disciplinary open access archive for the deposit and dissemination of scientific research documents, whether they are published or not. The documents may come from teaching and research institutions in France or abroad, or from public or private research centers.

L'archive ouverte pluridisciplinaire **HAL**, est destinée au dépôt et à la diffusion de documents scientifiques de niveau recherche, publiés ou non, émanant des établissements d'enseignement et de recherche français ou étrangers, des laboratoires publics ou privés.

Distributed under a Creative Commons Attribution - NonCommercial 4.0 International License

विपाशा

साहित्य, संस्कृति एवं कला की द्वैमासिकी

वर्ष 39, अंक 219, मार्च-अप्रैल, 2023

मुख्य संपादक

डॉ. पंकज ललित

निदेशक, भाषा एवं संस्कृति, हि.प्र.

उपसंपादक

अजय शर्मा

सम्पर्क : संपादक-विपाशा, भाषा एवं संस्कृति विभाग, हि.प्र.
39-एस.डी.ए., शिमला-171009,
दूरभाष : 0177-2626614-15-16, फैक्स : 2628789
सदस्यता शुल्क बैंक खाते में जमा करवाकर उसका विवरण और अपना पूरा पता
e-mail : vipashapatrika@gmail.com पर भेजें।
बैंक खाता संख्या : 50100562040901, **IFSC:** HDFC0002447
खाता धारक : निदेशक, भाषा एवं संस्कृति
त्रैवार्षिक शुल्क : 150 रुपये, वार्षिक : 60 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

समीक्षा

साहित्य का नया रास्ता

❑ डॉ. प्रमोद रंजन

हरे प्रकाश उपाध्याय के ताज़ा कविता-संग्रह 'नया रास्ता'[1] से गुज़रते हुए कुछ आवांतर बातें घुमड़ती रहीं।

हरे बिहार के भोजपुर अंचल के वासी हैं तथा हिंदी के उन कवियों में शामिल हैं, जिन्हें कम उम्र में ही सराहना मिली। 'खिलाड़ी दोस्त और अन्य कविताएँ' (2009) उनका पहला कविता संग्रह था। 'नया रास्ता' उनका दूसरा संग्रह है। उन्हें कविता लेखन के लिए अंकुर मिश्र सम्मान से नवाज़ा जा चुका है। लेकिन इस नए संग्रह की अधिकांश कविताएँ साधारण हैं। उन्होंने इनमें भारत की गरीबी[2], भूमंडलीकरण के दुष्प्रभाव[3], जातिवाद की समस्या[4] से सम्बंधित उन विषयों को उठाया है, जिन पर इसी लहजे में पहले ही बहुत बात हो चुकी है। इसके अलावा, इन कविताओं में कवि के लिए सुबह चाय बनाती[5] और दफ्तर से थक कर लौटने पर उसके चेहरे पर चिपका 'गुस्सा, चिंता, धूल-पसीना' को 'अपनी जीभ और होठों से पोंछ देना'[6] चाहने वाली गुड़ीमुड़ी पतिव्रता है, कागज़ पर चिट्ठियाँ लिखने वाली प्रेमिका[7] है। इन कविताओं में कवि टीवी और अखबार से त्रस्त है, क्योंकि टीवी 'गालियाँ देना', 'डिस्को' जाना और 'अवैध सम्बंध बनाना'[8] सिखाता है और अखबारों में 'अधनंगी नायिकाओं का सिक्का'[9] चलता है।

हरे प्रकाश का जन्म 1981 में हुआ है। यानी वे इस समय 41 वर्ष के हैं। पिछले लगभग डेढ़ दशक से मैंने कोई 'चिट्ठी' नहीं लिखी। यह ईमेल और अन्य डिज़िटल संदेशवाहक सेवाओं का दौर है। क्या आज प्रेम कर रही कोई लड़की 'चिट्ठी' लिख रही इस प्रेमिका से जुड़ाव महसूस करेगी? क्या आज की किसी पत्नी के मानस को ये कविताएँ छुएँगी या कोई पुरुष वास्तव में इसे अपने यथार्थ के निकट पाएगा? इंटरनेट के इस दौर में टीवी से 'अवैध सम्बंध बनाना सीखना' और अखबार में 'अधनंगी' लड़कियों की तस्वीर से त्रस्त रहना भी बताता है कि कविता की यह दुनिया समकालीन नहीं है। इंटरनेट के माध्यम से जेंडर-विमर्श घर-घर पहुँच चुका है। भारत समेत दुनिया के अनेक देशों में एलजीबीटीक्यू (LGBTQ) के अधिकारों को मान्यता मिल चुकी है। लेकिन आश्चर्य है कि इस दौर में भी हमारी कविता स्त्री के अपने मनपसंद कपड़े पहनने की आज़ादी से त्रस्त है! (अधनंगे लड़कों की तस्वीरों से उसे कोई गुरेज़ नहीं है)।

मज़ेदार यह है कि इसी संग्रह की एक कविता 'प्रथम मिलन' में हरे प्रकाश प्रथम संभोग का चित्रण करते हैं, जिसमें 'होठों की हलचल है', 'उधम मचाती देहगंध' है और

कवि के 'हाथों में उन अंगों की यादें' हैं। काम-क्रिया का चित्रण करने वाली इस कविता की निम्नांकित पंक्तियों में व्यक्त श्लेष में कवि क्या कहना चाहता है, यह भी पाठक से छिपा नहीं रहता—

तमतमाया था तुम्हारा चेहरा
पता नहीं वह क्या कहता था
तुम्हारी आँखों में इतना रस था
मैं पीता जाता था
तुम देती जाती थी
उसमें बहुत नशा था।[10]

कवि में मौजूद जेंडर सम्बंधी कुंठा तथा वैचारिक विरोधाभास, समकालीन यथार्थ से दूरी और कविता में अब तक चले आ रहे रूपक और प्रतीकों का निर्बुद्धिपूर्ण स्वीकार तथा कहने की शैली तथा संवेदनात्मक-तर्क के दुहराव के कारण हरे की इन कविताओं ने मन को उतनी गहराई से नहीं छुआ, जितनी अपेक्षा थी। लेकिन इन कमियों के बावजूद इन कविताओं के साथ समय गुज़ारना अच्छा लगा।

दरअसल, दिनों-दिन उपन्यास और कहानियाँ 'पढ़ना' कठिन होता जा रहा है। साहित्य सम्बंधी लेखन-अध्यापन में लगे हम लोगों को पढ़ने का काम अक्सर एक पेशागत काम की तरह करना पड़ता है। ऐसा साहित्य बहुत कम आ भी रहा है, जिसे पढ़कर बहुत कुछ नया मिलने की उम्मीद जगे। वस्तुतः बात सिर्फ किसी एक भाषा के साहित्य की नहीं है, परंपरागत रूप से जिसे हम विशुद्ध साहित्य कहते हैं, वह अब अपने समय की संवेदना, तेज़ी से बदलते यथार्थ और उपभोक्ता की ज़रूरतों की नब्ज़ पकड़ने में सफल नहीं हो रहा।

ऐसा क्यों है? लेखक पिछड़ गए हैं या प्रिंट नामक वह माध्यम पुराना पड़ गया है, जिसमें हम पिछले लगभग छह सौ सालों से[11] साहित्य को प्रसारित करने के आदी रहे हैं? या फ़िर 'साहित्य' ही अप्रासंगिक हो गया है?

संभवतः संकट दुहरा है। एक ओर प्रिंट माध्यम में काम करनेवाले लेखक अपने समय से पिछड़े हुए हैं, दूसरी ओर यह माध्यम भी पुराना पड़ गया है।

इंटरनेट और मल्टीमीडिया की तकनीक के कारण न सिर्फ सूचनाएँ बल्कि ज्ञान और संवेदना तक पहुँच सहज हो गई है। आज पढ़ने, जानने, गुगने के लिए चीज़ें बहुत ज़्यादा हैं, जबकि समय बहुत कम। अध्येताओं का कहना है कि लेखन के साढ़े पाँच हज़ार सालों के सम्पूर्ण इतिहास में जितना लिखा गया, उससे कहीं ज़्यादा इंटरनेट और सोशल मीडिया के आगमन के बाद आज एक दिन में लिखा जा रहा है।

इस कारण पाठक का अधिक समय लेने और उसके एवज़ में उसे बहुत कम देने वाली विधाएँ पीछे छूटती जा रही हैं और स्वाभाविक तौर पर उनके लेखक भी अप्रासंगिक हुए जा रहे हैं। 7 मिनट की एक छोटी-सी लघु-फिल्म आज हमें वह दे सकती है, जिसकी अपेक्षा एक उपन्यास या लम्बी कहानी से की जाती थी। बल्कि अनेक मामलों में वे लिखित साहित्य की तुलना में ज़्यादा देती हैं। यह सोचना खामखयाली है कि इन नए माध्यमों में व्यक्त यथार्थ जटिल नहीं है, या वे उस संवेदना को नहीं उभारती जिसे लिखित साहित्य उभारता है। बल्कि बहुआयामी होने के कारण वे यथार्थ की उन परतों को छूने में सक्षम हो जाती हैं, जहाँ प्रिंट

नहीं पहुँच सकता। ये नए माध्यम जैविक रूप से भी हमारे हारमोन्स को, हमारे भाव जगत के छुपे हुए कोनों को उद्वेलित करने में प्रिंट की तुलना में अधिक समर्थ हैं। ये अब तक अलक्षित रहे संवेदना के अनेक अनूठे बिंदुओं को उभारते हैं और प्रिंट की तुलना में अधिक गहरी छाप छोड़ते हैं। वस्तुतः ये नई विधाएँ साहित्य का ही विस्तार हैं, कथा और काव्य तत्व इनमें भी हैं और इन्हें इस रूप में देखने-समझने की कोशिश करनी चाहिए।

इस ख्याल से देखें तो साहित्य एक नए रास्ते पर चल पड़ा है। प्रिंट की एकरसता की जगह वह बहुआयामी माध्यमों के बीच निर्मित-प्रसारित हो रहा है और करोड़ों-करोड़ लोग उसके साथ चल रहे हैं। लेकिन पारंपरिक आलोचकगण पीछे छूट गए हैं। साहित्य के प्रसारण के नए माध्यमों को, इसके नए-नए रूपों को, इसके मूल्यों के नए वाहकों को वे रेखांकित नहीं कर पा रहे हैं। इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि साहित्य को पसंद करने वाले लोग बहुत कम हो गए हैं।

अभी तक आलोचना की प्रवृत्ति एकांतिक रही है। मलतब यह कि एक आलोचक अपने व्यक्तिगत ज्ञान के आधार पर कुछ कहता रहा है। लेकिन नई तकनीक, विशेषकर इंटरनेट के कारण सूचनाओं, ज्ञान और संवेदना का जो बहुवर्णी संसार निर्मित हुआ है, उसमें आलोचक के आप्त-वाक्य एकरस और महत्त्वहीन प्रतीत होने लगे हैं।

अलोचना के क्षेत्र में भी कुछ नई कोशिशों पर पिछले दिनों मेरी नज़र गई, जिसमें से एक का ज़िक्र सिर्फ बानगी के लिए कर रहा हूँ। विशेषकर इसलिए क्योंकि यह प्रयास तकनीक के क्षेत्र में अपेक्षाकृत पिछड़ी हुई भाषा हिंदी में हो रहा है। पोषम पा नामक हिंदी साहित्य पर केंद्रित वेबसाइट ने आलोचना का पॉडकास्ट शुरू किया है, जिसका नाम है—'अक्कड़-बक्कड़'। जिसमें नई-पुरानी साहित्यिक कृतियों, फिल्मों, डॉक्यूमेंटरियों पर सधी हुई आलोचनाएँ प्रसारित हो रही हैं। लेकिन यह आलोचना एकांतिक नहीं होती, बल्कि एक कृति पर तीन-चार लोग एक साथ चर्चा करते हैं और उसके विभिन्न पहलुओं को सामने लाते हैं। ये वे आलोचक नहीं हैं, जिन्हें हम साहित्यिक पत्रिकाओं में किसी कृति का प्रशस्ति पाठ करते तो किसी लेखक को दुर्वाशा-शाप देते देखते हैं। बल्कि ये युवा आलोचक हिंदी साहित्यिक जगत के लिए भी प्रायः अनाम हैं। इनमें से कुछ के नाम हैं—पुनीत कुसुम, शिवा, सोनत, सहज अज़ीज़ आदि। इनकी आवाज़ में खनक है और बातों में दम है। इनकी आलोचना में मौलिकता और बौद्धिक-तीक्ष्णता है। इस पर प्रसारित आलोचना-कार्यक्रमों के विषयों की बानगी देखिए—'चंदन पांडेय का वैधानिक गल्प', 'दो फिल्में : ओडिसी (1984) और ट्वेल्व इयर्स अ स्लेव (2013)', 'विद्या बालन की फिल्म शेरनी', 'मृदुला गर्ग का नाटक जादू का कालीन', 'भारतीय मध्यवर्ग पर विमर्श : संदर्भ हिंदी की समकालीन कहानियाँ', 'सुजाता का उपन्यास एक बटा दो', 'अ सीरियन लव स्टोरी (डॉक्यूमेंटरी फिल्म, 2015)', 'गुलज़ार का उपन्यास दो लोग' आदि।

इन विषयों में आप देख सकते हैं कि कैसे प्रिंट साहित्य, सिनेमा, डॉक्यूमेंटरी सब मिले-जुले हैं। कार्यक्रम ताज़गी भरी हिंदी में होता है, जैसा कि इस पॉडकास्ट के नाम 'अक्कड़-बक्कड़' से ही ज़ाहिर है। लेकिन विषय के लिए यह भाषा पर निर्भर नहीं है। यहाँ हिंदी, अंग्रेज़ी, स्पेनिश, उर्दू, फ्रेंच किसी भी भाषा के साहित्य और सिनेमा पर चर्चा होती है। इन आलोचकों के लिए कोई भी माध्यम कम या अधिक गंभीर नहीं है। वे इन्हें समान सहज

भाव से लेते हैं। यह आलोचना का नया बहुआयामी माध्यम है, जो अधिक समावेशी, अधिक सार्थक और कारगर है।

बहरहाल, मौजूदा दौर में लिखे जा रहे उपन्यास और कहानी-संग्रह की बजाय कविता-संग्रह मुझे अपनी ओर अधिक खींचते हैं। ऐसा नहीं है कि आज कहानियों की तुलना में कविताएँ अच्छी लिखी जा रही हैं, लेकिन कविता-संग्रहों में स्फुलिंग की तरह ही सही, कुछ न कुछ विशेष मिल जाने की उम्मीद अधिक रहती है और सबसे महत्त्वपूर्ण यह कि कविताएँ समय कम लेती हैं।

जैसे औद्योगिक-क्रांति के कारण उपन्यास की ओर रुझान बढ़ा था और काव्य किंचित् पीछे हो गया था; संभव है कि सूचना-क्रांति के परवर्ती काल में काव्य की महत्ता फिर से बढ़े। मुझे लगता है कि खासकर छोटी कविताओं में विचार और संवेदना का सूत्रीकरण अधिक पसंद किया जाएगा और ऐसे वैचारिक-साहित्य की पूछ सबसे अधिक बढ़ेगी, जो पाठक के सम्मुख तीक्ष्ण और सम्यक् विश्वदृष्टि रखे। वाक्जाल और अनावश्यक दृश्य-चित्रण; जोकि अभी कहानी और कविता का एक आवश्यक अंतर्निहित तत्व है, को अस्वीकार कर दिया जाएगा। मेरा मतलब है कि कोई विधा पाठक का जितना समय लेती है, अगर वह उसी अनुपात में पाठक को वे चीज़ें देती है, जिसकी तलाश में वह है, तो वह विधा आगे बढ़ेगी। चाहे वह कविता हो या मल्टीमीडिया पर आधारित कोई बिल्कुल नई चीज़। प्रिंट के अतिरिक्त साहित्य के प्रसार के अनेकानेक नए माध्यम भी विकसित और स्वीकृत होंगे, बानगी के तौर पर जिनका ज़िक्र मैंने ऊपर अक्कड़-बक्कड़ के संदर्भ में किया।

बात हरे प्रकाश के कविता संग्रह से शुरू हुई थी। हरे के इस संग्रह में भी कुछ ऐसी कविताएँ हैं, जो उनकी काव्य-प्रतिभा का पता देती हैं। तीन कविताएँ फेसबुक की ज़िंदगी पर केंद्रित हैं। इनके विषय का नयापन रेखांकित करने योग्य है। उनमें से एक देखें—

अमित्रता

आज कुछ मित्रों को अमित्र बनाया
यह काम पूरी मेहनत और समझदारी से किया
ज़रूरी काम की तरह
ज़िंदगी में ज़रूरी हैं मित्रताएँ
तो अमित्रता भी गैरज़रूरी नहीं
जो अमित्र हुए
हो सकता है वे मित्रों से बेहतर हों
मेरी शुभकामना है कि वे और थोड़ा-सा बेहतर हों
किसी मित्र के काम आएँ
इतना कि अगली बार जब कोई उन्हें अमित्र बनाने की सोचे
तो उसकी आत्मा उनकी रक्षा करे
तब तक मेरी यह प्रार्थना है
अमित्रों का दिल
उनके दल से मेरी रक्षा करे
अमित्र उन संभावनाओं की तरह हैं

जिन्हें अभी पकना है
जिनका मित्र मुझे फिर से बनना है।

—हरे प्रकाश उपाध्याय

इस कविता में फेसबुक की जो दुनिया है, वह इसे प्रासंगिक बनाती है। कविता आभासी दुनिया के नए लोकाचार को रेखांकित करती है और ट्रोल नामक नई प्रजाति को कविता की दुनिया का हिस्सा बनाती है। अमित्र कर देना, ब्लॉक कर देना आभासी दुनिया में जारी हिंसा, सांप्रदायिकता आदि के प्रतिकार का एक तरीका है। हरे प्रकाश की यह कविता चुपचाप इसे एक सैद्धांतिक आधार प्रदान करती है और 'अमित्रता' जैसा एक नया शब्द भी हिंदी को देती है। (मसलन, मैं 'ब्लॉक कर देना' के लिए अमित्रता जैसा सटीक हिंदी शब्द ढूँढने में असमर्थ हूँ)

वर्चुअल दुनिया से सम्बंधित इन कविताओं और अक्कड़-बक्कड़ जैसे पॉडकास्टों व साहित्य और तकनीक के सम्मिश्रण के लिए जारी अनेकानेक कोशिशों से गुज़रते हुए आशा बनती है कि पुराने मिज़ाज की हिंदी आलोचना भी देर-सबेर साहित्य के नए रास्तों को स्वीकार करेगी।

हरे प्रकाश के संग्रह की शीर्षक— कविता 'नया रास्ता' की पंक्तियाँ हैं—
जब सारे जाने हुए रास्ते बंद हो जाते हैं
तो आदमी एक नए रास्ते के बारे में सोचता है।
साहित्य के बारे बात करते हुए उनकी पंक्तियों को कुछ ऐसे भी कहा जा सकता है—
जब सारे जाने हुए माध्यम पुराने पड़ जाते हैं
तो साहित्य नए रास्तों के बारे में सोचता है।

संदर्भ :

1. उपाध्याय हरे प्रकाश, नया रास्ता, प्रथम संस्करण, रशिम प्रकाशन, लखनऊ, 2021
2. उपाध्याय हरे प्रकाश, 'इंतज़ार', नया रास्ता' रश्मि प्रकाशन, लखनऊ
3. उपाध्याय हरे प्रकाश, 'अब यह देश', नया रास्ता, रश्मि प्रकाशन, लखनऊ
4. उपाध्याय हरे प्रकाश, 'खंडहर-1', नया रास्ता, रश्मि प्रकाशन, लखनऊ
5. उपाध्याय हरे प्रकाश, 'दफ्तर', नया रास्ता, रश्मि प्रकाशन, लखनऊ
6. उपाध्याय हरे प्रकाश, 'बॉस और बीबी', नया रास्ता, रश्मि प्रकाशन, लखनऊ
7. उपाध्याय हरे प्रकाश, 'अधूरे प्रेम का अंधेरा', नया रास्ता, रश्मि प्रकाशन, लखनऊ
8. उपाध्याय हरे प्रकाश, 'दफ्तर', नया रास्ता, रश्मि प्रकाशन, लखनऊ,
9. उपाध्याय हरे प्रकाश, 'आंसू', नया रास्ता, रश्मि प्रकाशन, लखनऊ
10. उपाध्याय हरे प्रकाश, 'प्रथम मिलन', नया रास्ता, रश्मि प्रकाशन, लखनऊ
11. जर्मनी के जॉन गुटनबर्ग 1440 से 1450 ईसवी के बीच तैलीय स्याही से मुद्रण की तकनीक खोजी थी, जिससे मौजूदा मुद्रण कला का जन्म हुआ।

'नया रास्ता' (कविता संग्रह), **हरे प्रकाश उपाध्याय,** रश्मि प्रकाशन, लखनऊ-226023 मू. 200/- रु., पृ. 102

[सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, असम विश्वविद्यालय, दीफू, असम-782462]

मो. 98118 84495